जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी

मामनुस्मर युद्ध्य च
जयन्ती प्रकाशन लक्ष्मणगढ़

शेखावाटी सन्मार्ग

भारत सरकार पंजीसन नं. : 72322/91

सतीनां वै सतांचैव दातॄणां विदुषा तथा।
आकरं गुण शीलानां लक्ष्मणदुर्गं मनोहरम्।।

नमोस्तु रामाय सलक्ष्मणाय देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै।
नमोस्तु रुद्रेन्द्र यमानिलेभ्यो नमोस्तु चन्द्रार्कमरुद्गणेभ्यः।।

Mob: 9828665353
Web: www.srrividya.com

पाक्षिक/वर्ष-31/अङ्क – 32 लक्ष्मणगढ़ 01 अप्रैल 2022 मूल्य (विशेषाङ्क सहित) 100/- रु.वार्षिक

विक्रमादित्य – विक्रम संवत् के प्रवर्त्तक

भयंकर युद्धों में विदेशी आक्रमणकारियों को परास्त कर, दुश्मनों को इस देश से निकाल बाहर कर भारत की रक्षा करते हुए अपने नाम से विक्रम संवत् का प्रवर्तन अर्थात् प्रारम्भ करने वाले चक्रवर्ती

सम्राट विक्रमादित्य का नाम विक्रम सेन था। अपने ज्ञान, वीरता और उदारशीलता के लिए प्रसिद्ध विक्रमादित्य का जन्म कलि काल के 3000 वर्ष बीत जाने पर 101 ईसा पूर्व हुआ और उन्होंने 100 वर्ष तक राज किया। विक्रमादित्य भारत की प्राचीन नगरी उज्जयिनी के राजसिंहासन पर बैठने वाले चक्रवर्ती सम्राट थे । जिनके दरबार में उपस्थित रहने वाले नवरत्न आज भी प्रसिद्ध हैं । इनमें कालिदास भी थे। कहा जाता है कि विक्रमादित्य बड़े पराक्रमी थे और उन्होंने शकों को परास्त किया था। देश में सर्वाधिक प्रचलित विक्रम संवत् को उज्जैन के राजा विक्रमादित्य द्वारा ही प्रवर्तित माना जाता है। 3068 कलि अर्थात 34 ईसा पूर्व में रचित ज्योतिर्विदाभरण ग्रंथ में इस संवत् के विक्रमादित्य द्वारा प्रवर्तन किये जाने की पुष्टि करते हुए कहा गया है कि विक्रमादित्य ने 3044 कलि अर्थात 57 ईसा पूर्व विक्रम संवत् चलाया। कुछ ग्रंथों के अनुसार इन्द्रप्रस्थ के राजा राजपाल (36 वर्ष) को सामंत महानपाल ने मारकर मात्र एक पीढ़ी में चौदह वर्ष तक राज्य किया। राजा महानपाल के राज्य पर राजा विक्रमादित्य ने अवन्तिका (उज्जैन) से लड़ाई करके महानपाल को मारकर एक पीढ़ी में 93 वर्ष तक राज्य किया।

महाराजा विक्रमादित्य के सम्बन्ध में भविष्य पुराण और स्कंद पुराण में विस्तृत विवरण अंकित मिलता है। भविष्य पुराण के अनुसार, नाबोवाहन (नववाहन) के पुत्र राजा गंधर्वसेन भी चक्रवर्ती सम्राट थे। गंधर्वसेन के पुत्र विक्रमादित्य और भर्तृहरी थे। विक्रमादित्य ईसा मसीह के समकालीन थे और उस समय उनका शासन अरब तक फैला हुआ था और उन्होंने अरब देश में एक ही स्थान पर 360 मंदिरों का निर्माण करवाया था जिसके मध्य में मक्केश्वर महादेव विराजमान थे। विक्रमादित्य के बारे में प्राचीन अरब साहित्य में भी वर्णन मिलता है। दरअसल, विक्रमादित्य का शासन अरब और मिस्र तक फैला हुआ था और संपूर्ण विश्व उनके नाम से परिचित था। फिर भी विक्रमादित्य के इतिहास को अंग्रेजों ने जान-बूझकर तोड़ा और भ्रमित किया और उसे एक मिथकीय चरित्र बनाने का हर सम्भव प्रयास किया, क्योंकि विक्रमादित्य उस काल में महान व्यक्तित्व और शक्ति के प्रतीक थे, जबकि अंग्रेजों को अपने आपको सर्वोपरि और फिर भारत को अनंत काल तक दासता की बेड़ी में जकड़े रहने के लिए यह सिद्ध करना जरूरी था कि ईसा मसीह के काल में दुनिया अज्ञानता में जी रही थी। लेकिन ऐतिहासिक ग्रन्थों के अध्ययन से ठीक इसके विपरीत इस सत्य का सत्यापन होता है कि कश्मीर के एक राजा मेघवाहन हुए हैं , जिन्होंने भारत में बाहर वर्षीय कुम्भों के समारोह की प्रथा आरम्भ की थी।

वर्तमान भारत में दो संवत् प्रमुख रूप से प्रचलित है, विक्रम संवत् और शक – शालिवाहन संवत् | दोनों संवतों का सम्बन्ध शकों की पराजय से है | उज्जैन मन्दिर के पंवार वंशीय राजा विक्रमादित्य ने जब शकों को सिंध के बाहर धकेलकर महान विजय प्राप्त की थी, तब उन्हें शकारि की उपाधि धारण करवाई गयी थी तथा तब से ही विक्रम संवत् का शुभारम्भ हुआ | विक्रमादित्य की मृत्यु के पश्चात् शकों के उपद्रव पुनः प्रारम्भ हो गए, तब उन्हीं के प्रपौत्र राजा शालिवाहन ने शकों को पुनः पराजित किया और इस अवसर पर शालिवाहन संवत् प्रारम्भ हुआ, जिसे हमारी केंद्र सरकार ने राष्ट्रिय संवत् माना है | जो कि सौर गणना पर आधारित है |

गणगौर

गणगौर पूजा प्रेम एवं पारिवारिक सौहार्द का एक बहुत ही पावन पर्व माना जाता है। गणगौर पूजा कोभारत के विभिन्न राज्यों के लोगों द्वारा मनाया जाता है। गणगौर का संधि विच्छेद करें तो हमारे सामने दो शब्द आते हैं, एक तो 'गण' और दूसरा 'गौर'। यदि हम इन दोनों शब्दों के अलग-अलग अर्थ बताएं तो गण शब्द का अर्थ भगवान् शिव जी से है। अर्थात गण शब्द भगवान् शंकर जी के लिए प्रयोग किया जाता है। यही इसके विपरीत गौर शब्द का अर्थ माता पार्वती से होता है।

गणगौर पूजा राजस्थान के अन्य पर्वों में से सबसे महत्वपूर्ण पर्व है। गणगौर पर्व को न केवल राजस्थानी बल्कि भारत के अन्य राज्यों में भी मनाया जाता है। राजस्थान में इस त्यौहार की काफी मान्यता है। राजस्थान राज्य में गणगौर पूजा को आस्था के साथ मनाया जाता है और गणगौर व्रत के दिन भगवान् शंकर और माता पार्वती का पूजन किया जाता है।
सभी महिलाएँ इस दिन ईसर जी (भगवान् शंकर जी) और पार्वती जी का पूजन करते हैं।

गणगौर के गीत

(1)

गौर ए गणगौर माता खोल ए किवाड़ी
बाहर ऊबी थारी पूजण वाली।
पूजो ए पूजो बाईयां , काई काई मांगों
म्हे मांगा अन्न धन , लाछर लक्ष्मी।
जलहर जामी बाबुल मांगा, राता देई मायड़
कान कंवर सो बीरो मांगा , राई सी भौजाई।
ऊँट चढयो बहनोई मांगा , चूंदड़ वाली बहना
पूस उड़ावन फूफो मांगा , चूड़ला वाली भुवा।
काले घोड़े काको मांगा , बिणजारी सी काकी
कजल्यो सो बहनोई मांगा , गौरा बाई बहना।
भल मांगू पीहर सासरो ये भल मांगू सौ परिवार ये
गौर ए गणगौर माता खोल ए किवाड़ी।

(2)

खींपोळी म्हारी खींपा छांई
तारां छांई रात
या नगरी नारेळां छाई
राजा कल्याण सिंह रै परताप ।
भावजड़ी म्हारी पूंता छांई
बीरां रै परताप ।
थैं चिरजीवौ इसरदास जी रा, कनीराम जी रा ।
ओ म्हारा घुड़ला घरां औ पुगाय, पुगास्या अै डावड़ी
थैं तो घड़ी पळक सुस्ताय ।
सोटकड़ी सटकाय रै पातळियां
म्हारा गौर् यां रा दिन च्यार ।
गोरळ पूजे बामण बाण्या, राठौड़ा रजपूत ।
बेटी पूजे राव की रै बीरा
सहर पड़् या रमझोळ
नीसर गोरां तीजणीरै, थांरी साथण ऊबी बां र ।
ऊबीर् यौ अै डावङ् यां, म्हारी भावज करै सिणगार ।
पहर पटोड़ौ ओढ़ दुरंगो नीसरी, रै बीरा, इसरदास थांरी घर नार ।
बीछ्या बजावत नीसरी रै वीरा, कनीराम थांरी घर नार ॥

सम्पादकीय

" सन्मार्ग एव सर्वत्र पूज्यतेनाऽपथ: क्वचित् "

(शहीद दिवस – 23 मार्च के उपलक्ष्य में विशेष)

लोमहर्षक अत्याचार की गाथा : वीर बन्दा वैरागी का बलिदान

एक दिल्ली नगर और एक कोहिनूर हीरे में भारत की सारी क्रान्तियों का सम्पूर्ण इतिहास आ जाता है दिल्ली में वध हुए | दिल्ली में रक्तपात हुए | दिल्ली को तैमूर, नादिर और अब्दाली के आक्रमण कभी नहीं भूल सकते | १९५७ के सिपाही – विद्रोही के चिन्ह भी स्थिर रहेंगे | परन्तु जो दृश्य इस समय हमारे सन्मुख आता है वैसा दिल्ली में न कभी हुआ और न कदाचित कभी होगा | दिल्ली की घटनाएँ तो एक और रहीं यह घटना संसार के इतिहास में अनुपम है | एक महावीर, सच्चा त्यागी, रणयोद्धा और तपस्वी लोहे की जंजीरों से जकड़ा हुआ दिल्ली लाया गया | उसके साथ सातसौ चालीस और साथी थे, उन्होंने सुख – दुःख में, गर्मी – सर्दी में, हार – जीत में इस का साथ दिया था | ये इस की सारी सेना के मुकुट थे, उन्होंने तख्तलसा के पृथक् होने पर भी इस का साथ नहीं छोड़ा और जो गुरुदासपुर के कष्टों और मृत्यु यंत्राणओं से गुजर कर जीवित रह गए थे वे कोई साधारण मनुष्य न थे | सब के सब भारत माता के लाल थे ; जो बंदा वैरागी के साथ गिरफ्तार करके लाये गए थे |

आँखों और आँखों में अन्तर होता है | बादशाह की दृष्टि में ये लोग वीर न थे प्रत्युत भेड़ें थीं | वह चाहता था कि लोग भी इन को भेड़ें समझें | सब को काली भेड़ों की खालें पहनाई गई और गधों पर सवार किया गया | वैरागी का मुंह कला कर दिया गया और नगर के सब गली कूंचों में फिराया गया |

क़ाज़ियों के सन्मुख सैनिकों समेत वैरागी को पेश किया गया। उन्होंने अपने नियम और धर्मशास्त्र के अनुसार पहली शर्त पेश की कि तुम्हें प्राणदान दिया जा सकता है यदि इस्लाम को ग्रहण कर लो । ऐसा प्रस्ताव करना इन धर्मवीरों का मान करना था। इन्होंने इस प्रस्ताव पर घृणा प्रगट करते हुए यह कहा - "प्राण हरण करना या दान करना तुम्हारे हाथ में नहीं। कब तक तुम हमें जीवन दान कर सकते हो ?" सब के वध की आज्ञा सुनाई गई । दण्ड को सुन कर ये वीर प्रफुल्लित दिखाई देने लगे । नित्यप्रति कोतवाली के सामने एक सौ का वध किया जाता था। मानवी हृदय की का जिस ने थोड़ा बहुत अनुशीलन किया हो उसे विदित होना चाहिए कि जहां भीरू मनुष्य मृत्यु के भय के नीचे दब जाता है और सदा रोदन करता हुआ मृत्यु-मुख में जाता है, वहां साहसी मनुष्य जब अपना कर्त्तव्य पूर्ण करते हुए मौत का सामना करता है तो वह हंसता-हंसता उस का आलिङ्गन करता है । वह इसी लिए प्रसन्न रहता है कि अपना धर्म पूर्ण करने में उसे ऐसा पुरस्कार मिल रहा है जिसे भूल में साधारण लोग दण्ड कहते हैं ।

इन वीरों के प्रमोद का अनुमान एक सोलह वर्ष के बालक के दृष्टान्त से लगाया जा सकता है । इस बालक की बूढ़ी मां रोती पीटती जल्लादों के पास पहुंची और कहने लगी- "मेरा पुत्र निर्दोष है। यह बिना किसी अपराध के ही पकड़ा गया है। यह वैरागी का सिक्ख नहीं, इसे छोड़ दो।" उस की बारी आई । जल्लादों ने उसे छोड़ दिया। बालक ने कहा- "मेरे लिए क्यों विलम्ब किया जा रहा है। मैं शीघ्र स्वर्गारोहण करना चाहता हूं।" उसे बताया गया कि तुम्हारी माता तुम्हारी प्राण रक्षा के लिये प्रार्थना करती है। उसने उत्तर दिया- "यह ग़लत कहती है ।" माता को सम्बोधित करते हुए उस ने कहा – "तू बड़ी हत्यारी है जो मुझे स्वर्ग से निकाल नरक में फेंकना चाहती है।" माँ बेचारी रोती हुई परे हट गई ।

आठवें दिन वैरागी की बारी आई दरबारी इसे देखने के लिए आए । इन में से एक अमीर मुहम्मद अमीन ने वैरागी से प्रश्न किया- "तुम्हारे जैसे धीमान् पुरुष ने क्यों ऐसे बुरे कान किए जिन के लिए तुम्हारी ऐसी दुर्दशा हो रही है ?" वैरागी ने उत्तर दिया- मैं तो प्रजा-पीड़कों को दण्ड देने के लिए ईश्वर के हाथ में शस्त्र था। क्या तुम ने सुना नहीं है कि जब संसार में गर्व मर्यादा से बढ़ जाता है और ईश्वर की प्रजा तंग आ जाती है तो मुझ जैसा दुष्टों का संहार करने वाला जन्म लेता है।"

बादशाह ने वैरागी से पूछा कि तुम कैसी मौत मरता चाहते हो । वैरागी ने गम्भीरता से उत्तर दिया- 'जैसे तुम्हारी इच्छा हो मारो ! मेरे लिए सब तरह की मौत एक समान है। मैं तो इस शरीर को ही सब दुःखों का मूल समझता हूं।"

वैरागी के चहुं ओर भालों की पंक्तियाँ खड़ी की गईं, जिन पर इसके साथियों के सिर ढंगे थे। एक भाले पर इसकी प्यारी बिल्ली का कटा हुआ सिर लटक रहा था । वैरागी का छोटा सा बालक इसकी जांघों पर रक्खा गया। बादशाह ने छुरा देकर आज्ञा दी- "अपने हाथों से बालक का बध करो !" वैरागी ने जब इस में इन्कार किया तो जल्लाद ने वैरागी के देखते देखते बालक के दो टुकड़े कर दिये और रुधिर-सिञ्चित कलेजे को इसकी छाती पर दे मारा । तत्पश्चात् लोहे की गर्म सलाखों से बैरागी को रह रह कर मारना आरम्भ किया गया। तपे हुए लाल चिमटों से खेंच खेंच कर इसके लोथढ़े बाहर निकाल दिए गए; यहां तक कि शरीर की हड्डियां दिखाई देने लगीं। मरते दम तक इसे सच्चा अभिमान था कि इसने अत्याचार के वृक्ष की जड़ों को उखाड़ दिया है। यह वृक्ष कभी न फूले फलेगा। इसके मुख पर खेद का कोई चिन्ह न था। इसके मुख से उन तक न निकली। जब वैरागी की बोटियाँ उतर रही थीं यह जनक की तरह निर्देह बैठा हुआ था। नजीबुदुल्ला ने इस से पूछा कि इतने कष्ट मिलने पर भी तुम प्रसन्न कैसे हो ? वैरागी का उत्तर था "जिसे आत्मा का ज्ञान है वह जानता है कि आत्मा दुःखातीत है।" कहा जाता है कि इतने कष्ट देने के बाद वैरागी हाथी के पांव तले रौंदवा कर मार डाला गया।

इस देश के अन्दर एक वीर उत्पन्न हुआ, जिसके जीवन के कारनामे अनुपम हैं, जिसकी शहादत अद्वितीय है। परन्तु आश्चर्य है तो केवल इस बात का कि इस जाति ने ऐसे वीर शिरोमणि को सुला दिया ! यदि इसके आत्मावसान पर कोई समाधि न हो तो कोई हर्ज नहीं, यदि इसके नाम पर कोई मन्दिर या गुरुद्वार न हो तो भी कोई हर्ज नहीं, यदि इस का और किसी प्रकार का कोई स्मारक न हो तो परवाह नहीं, परन्तु यदि हिन्दू बच्चों के हृदय-मन्दिरों में राम और कृष्ण की तरह वैरागी का नाम नहीं बसता तो उस जाति के लिये इस से बढ़ कर और कोई घोर और अक्षम्य पाप न होगा ।

(संकलित तथ्यों के आधार पर)

शशिकान्त जोशी
सम्पादक

अमर हुतात्मा सुखदेव

सुखदेव (वर्ष 1907-1931) एक प्रसिद्ध भारतीय क्रांतिकारी थे, जिन्होंने स्वतंत्रता के लिए भारत के संघर्ष में एक प्रमुख भूमिका निभाई थी। वह उन महान भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों में से हैं, जिन्होंने अपने देश की स्वतंत्रता के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया। इनका पूरा नाम सुखदेव थापर है और इनका जन्म 15 मई 1907 को हुआ था। इनका पैतृक घर भारत के लुधियाना शहर, नाघरा मोहल्ला, पंजाब में है। इनके पिता का नाम राम लाल था। अपने बचपन के दिनों से, सुखदेव ने उन क्रूर अत्याचारों को देखा था, जो शाही ब्रिटिश सरकार ने भारत पर किए थे, जिसने उन्हें क्रांतिकारियों से मिलने के लिए बाध्य करदिया और उन्होंने भारत को ब्रिटिश शासन के बंधनों से मुक्त करने का प्रण किया।

सुखदेव थापर हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन (एचएसआरए) के सदस्य थे और उन्होंने पंजाब व उत्तर भारत के अन्य क्षेत्रों के क्रांतिकारी समूहों को संगठित किया। देश भक्त नेता सुखदेव लाहौर नेशनल कॉलेज में युवाओं को शिक्षित करने के लिए गए और वहाँ उन्हें भारत के गौरवशाली अतीत के बारे में अत्यन्त प्रेरणा मिली। उन्होंने अन्य प्रसिद्ध क्रांतिकारियों के साथ लाहौर में 'नौजवान भारत सभा' की शुरुआत की, जो विभिन्न गतिविधियों में शामिल एक संगठन था। इन्होंने मुख्य रूप से युवाओं को स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने और सांप्रदायिकता को खत्म करने के लिए प्रेरित किया था।

सुखदेव ने खुद कई क्रांतिकारी गतिविधियों जैसे वर्ष 1929 में 'जेल की भूख हड़ताल' में सक्रिय भूमिका निभाई थी। लाहौर षडयंत्र के मामले (18 दिसंबर 1928) में उनके साहसी हमले के लिए, उन्हें हमेशा भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के इतिहास में याद किया जाएगा, क्योंकि उसमें इन्होंने ब्रिटिश सरकार की नींव को हिलाकर रख दिया था। सुखदेव, भगत सिंह और शिवराम राजगुरु साथी थे, जिन्होंने मिलकर वर्ष 1928 में पुलिस उप-अधीक्षक जे. पी. सॉन्डर्स की हत्या की थी, इस प्रकार के षडयंत्र को बनाकर पुलिस उप-अधीक्षक को मारने का कारण वरिष्ठ नेता, लाला लाजपत राय की मौत का बदला लेना था। नई दिल्ली (8 अप्रैल 1929) की सेंट्रल असेंबली में बम विस्फोट करने के कारण, सुखदेव और उनके सहयोगियों को गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें इस अपराध का दोषी ठहराया गया तथा फैसले के रूप में इन्हें मौत की सजा सुनाई गई।

23 मार्च 1931 को, तीन बहादुर क्रांतिकारियों, भगत सिंह, सुखदेव थापर और शिवराम राजगुरू को फाँसी दी गई, जबकि उनके शरीर का सतलज नदी के किनारे गुप्त रूप से अंतिम संस्कार कर दिया गया। सुखदेव थापर सिर्फ 24 वर्ष के थे, जब वह अपने देश के लिए शहीद हो गए थे। हालांकि, उन्हें हमेशा भारत की आजादी के लिए अपने साहस, देशभक्ति और जीवन त्याग के लिए याद किया जाएगा।

जेल की भूख हड़ताल - सुखदेव ने कई क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लिया। सुखदेव द्वारा वर्ष 1929 में जेल में की जाने भूख हड़ताल उनमें से प्रमुख थी।

लाहौर षड़यंत्र - 18 दिसंबर 1928 के लाहौर षड़यंत्र के मामले में इनके उल्लेखनीय योगदान के लिए, उन्हें आज भी याद किया जाता है।

महात्मा गांधी को पत्र - फाँसी लगने से कुछ दिन पहले सुखदेव ने गांधी को एक पत्र लिखा था, जिसमें उन्होंने कहा था कि "लाहौर षड्यंत्र के तीन कैदियों को मौत की सजा सुनाई गई है"। उन्होंने यह भी लिखा, "[...] देश में उनको अपराधी ठहराने से इतना बदलाव नहीं आएगा, जितना उनके द्वारा फाँसी दिए जाने पर आएगा।"

विशेष अधिकरण - 7 अक्टूबर 1930 को 300 पृष्ठों के फैसले में सभी सक्ष्यों के आधार पर न्यायालय द्वारा सान्डर्स हत्याकांड के मामले के लिए सुखदेव और राजगुरु को फाँसी दी गई थी।

फाँसी का दंड - लाहौर षडयंत्र मामले में, भगत सिंह, राजगुरू और सुखदेव को मौत की सजा दी गई थी। अदालत ने आदेश दिया कि तीनों को 24 मार्च 1931 को फाँसी दी जाएगी। पंजाब के गृह सचिव ने 24 मार्च 1931 को फाँसी की तारीख को बदल 23 मार्च 1931 कर दिया था।

विशेष न्यायाधिकरण की आलोचना - न्यायाधिकरण द्वारा निर्णय की राष्ट्रव्यापी आलोचना की गई, क्योंकि ब्रिटिश सरकार की इच्छा के अनुसार कानून और व्यवस्था का आयोजन किया जा रहा था। पहली बार क्रियान्वयन शाम में हुआ। इसके अलावा, अधिकारियों ने आरोपी के परिवार को फाँसी से पहले मिलने भी नहीं दिया और न ही उन्होंने तीनों के शरीर को अपने रिश्तेदारों को अपने आखिरी अनुष्ठान करने के लिए सौंपा। बल्कि शरीर का निपटारा टुकड़ों में काटकर और मिट्टी के तेल के साथ जलाकर किया। बाद में शेष अवशेष सतलुज नदी में फेंक दिया था।

सम्मान - 23 मार्च देश भर में उन महान नायकों के बलिदान के सम्मान में शहीद दिवस के रूप में मनाया जाता है।

अमर हुतात्मा राजगुरु

राजगुरु का जन्म 24 अगस्त 1908 को वर्तमान महाराष्ट्र राज्य के रत्नागिरी जिले के खेड़ तहसील में हुआ था। उनके पिता का नाम हरिनारायण राजगुरु तथा माता का नाम पार्वती देवी था। उनका परिवार एक मराठी देशस्थ ब्राह्मण परिवार था। जब राजगुरु मात्र 6 वर्ष का था तब उसके पिता का देहांत हो गया था।

पिता के देहांत होने के बाद घर की सारी जिम्मेदारियां राजगुरु के बड़े भाई दिनकर पर आ गई। हालांकि राजगुरु छोटा था तो उसे उच्च शिक्षा प्राप्त करने का भी अवसर मिला। उसने खेड़ में अपनी प्राथमिक शिक्षा पूर्ण की और उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए वह पुणे के न्यू इंग्लिश हाई स्कूल में दाखिल हुआ।

क्रान्तिकारी जीवन

चंद्रशेखर आजाद ने हिंदुस्तान रिपब्लिकन संगठन को पुनर्स्थापित किया। इस संगठन को पुनर्स्थापित करने के बाद उन्होंने इसे हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन संगठन का नाम दिया। यह संगठन क्रांतिकारियों का संगठन था जिसमें क्रांतिकारी लोग जुड़ते थे और अंग्रेजो के खिलाफ क्रांतिकारी गतिविधियां करते थे।

हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन संगठन में सुखदेव, भगत सिंह व अनेकों क्रांतिकारी व्यक्ति थे जिनमें राजगुरु भी सम्मिलित थे।

एक क्रांतिकारी घटना में सुखदेव, भगत सिंह व राजगुरु ने ब्रिटिश अधिकारी जॉन सॉन्डर्स की हत्या कर दी। यह घटना 17 दिसंबर 1928 को लाहौर में हुई थी।

उन तीनों ने उस ब्रिटिश अधिकारी को इसलिए मारा था क्योंकि वे लाला लाजपत राय की मृत्यु का बदला लेना चाहते थे। साइमन कमीशन के विरोध के दौरान पुलिस ने लाला लाजपत राय को बहुत गहरी चोटें पहुंचाई जिसकी वजह से उनकी मृत्यु हो गई थी।

फाँसी

ब्रिटिश सरकार ने शिवराम राजगुरु, भगत सिंह व सुखदेव को जॉन सॉन्डर्स की हत्या के अपराध के रूप में फांसी की सजा सुनाई। सजा के मुताबिक, उन तीनों क्रांतिकारियों को 24 मार्च 1931 को फांसी होनी थी।

परंतु ब्रिटिश सरकार ने लोगों के विद्रोह के भय से, फांसी की सजा की वास्तविक दिनांक से एक दिन पहले ही यानि 23 मार्च 1931 को भगत सिंह व सुखदेव सहित राजगुरु को लाहौर की जेल में फांसी दे दी गई।

भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु का अंतिम संस्कार पंजाब के फिरोजपुर जिले के हुसैनवाला गांव में सतलज नदी के किनारे पर किया गया था।

जब तीनों वीर क्रांतिकारियों की मृत्यु की सूचना प्रेस व न्यूज़ में आई तब युवाओं ने ब्रिटिश सरकार के खिलाफ रोष जाहिर किया। कुछ सूचनाओं के मुताबिक, महात्मा गांधी को भी इस हत्याकांड का दोषी भी ठहराया गया था।

शहीद दिवस

पंजाब के फिरोजपुर जिले के हुसैनवाला गांव में शिवराम राजगुरु, भगत सिंह तथा सुखदेव के अंतिम संस्कार के बाद वहां पर स्मृति स्थल बनाया गया। प्रत्येक वर्ष 23 मार्च को राजगुरु, भगत सिंह तथा सुखदेव के सम्मान में राष्ट्र शहीद दिवस मनाया जाता है।

राजगुरु के सम्मान में, उनके जन्म स्थान खेड़ का नाम बदलकर उसे "राजगुरूनगर" कर दिया गया। इसके अलावा दिल्ली विश्वविद्यालय के एक कॉलेज का नाम भी "शहीद राजगुरू कॉलेज आफ अप्लाइड साइंसेज फॉर वूमेन" रखा गया।

इनसे जुड़ी कुछ बातें

- राजगुरु जी और उनके साथियों को जब मौत की सजा दी गई थी तो इस सजा का विरोध हर किसी ने किया था. लोगों के इस विरोध से डर कर अंग्रेजों ने इन तीनों का अंतिम संस्कार चुपके से कर दिया था और इन तीनों वीरों की अस्थियों को सतलुज नदी में बहा दिया था.
- सॉन्डर्स की हत्याकांड को राजगुरु और भगत सिंह द्वारा अंजाम दिया गया था और सॉन्डर्स को मारने के लिए सबसे पहले गोली राजगुरु जी की बंदूक से निकली थी.
- राजगुरु जी छत्रपति शिवाजी महाराज से काफी प्रभावित थे और उनके ही नक्शे कदम पर चला करते थे. गौरतलब है कि छत्रपति शिवाजी महाराज जी भारत के एक महान योद्धा थे.
- राजगुरु जी को कुश्ती करना और शारीरिक अभ्यास करना बेहद ही पसंद था और कहा जाता है कि वो कई कुश्तियों की प्रतियोगिता में भी हिस्सा लिया करते थे और कुश्ती के कई तरह के संगठनों से भी जुड़े हुए थे.
- हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन से जुड़े राजगुरु जी को इनकी पार्टी के लोगों द्वारा राजगुरु की जगह रघुनाथ नाम से बुलाया जाता था.

अमर हुतात्मा भगत सिंह

जन्म और परिवेश

भगत सिंह का जन्म दिवस 24 सितंबर 1906 (अश्विन कृष्णपक्ष सप्तमी) को प्रचलित है परन्तु तत्कालीन अनेक साक्ष्यों के अनुसार उनका जन्म 27 सितंबर 1907 ई० को एक सिख परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम सरदार किशन सिंह और माता का नाम विद्यावती कौर था। एक किसान परिवार से थे। अमृतसर में १३ अप्रैल १९१९ को हुए जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड ने भगत सिंह की सोच पर गहरा प्रभाव डाला था। लाहौर के नेशनल कॉलेज़ की पढ़ाई छोड़कर भगत सिंह ने भारत की आज़ादी के लिए नौजवान भारत सभा की स्थापना की थी।

वर्ष 1922 में चौरी-चौरा हत्याकांड के बाद गाँधी जी ने जब किसानों का साथ नहीं दिया तब भगत सिंह बहुत निराश हुए। उसके बाद उनका अहिंसा से विश्वास कमजोर हो गया और वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि सशस्त्र क्रांति ही स्वतंत्रता दिलाने का एक मात्र रास्ता है। उसके बाद वह चन्द्रशेखर आजाद के नेतृत्व में गठित हुई गदर दल के हिस्सा बन गए। काकोरी काण्ड में पं. राम प्रसाद 'बिस्मिल' सहित ०४ क्रान्तिकारियों को फाँसी व १६ अन्य को कारावास की सजाओं से भगत सिंह इतने अधिक उद्विग्न हुए कि चन्द्रशेखर आजाद के साथ उनकी पार्टी हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसिएशन से जुड़ गए और उसे एक नया नाम दिया हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन। इस संगठन का उद्देश्य सेवा, त्याग और पीड़ा झेल सकने वाले नवयुवक तैयार करना था।

भगत सिंह ने सुखदेव एवं राजगुरु के साथ मिलकर १७ दिसम्बर १९२८ को लाहौर में सहायक पुलिस अधीक्षक रहे अंग्रेज़ अधिकारी जे० पी० सांडर्स को मारा था। इस कार्रवाई में क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आज़ाद ने उनकी पूरी सहायता की थी। क्रान्तिकारी साथी बटुकेश्वर दत्त के साथ मिलकर भगत सिंह ने वर्तमान नई दिल्ली स्थित ब्रिटिश भारत की तत्कालीन सेण्ट्रल एसेम्बली के सभागार संसद भवन में ८ अप्रैल १९२९ को अंग्रेज़ सरकार को जगाने के लिये बम और पर्चे फेंके थे। बम फेंकने के बाद वहीं पर दोनों ने अपनी गिरफ्तारी भी दी।

क्रन्तिकारी गतिविधियाँ

उस समय भगत सिंह करीब बारह वर्ष के थे जब जलियाँवाला बाग हत्याकाण्ड हुआ था। इसकी सूचना मिलते ही भगत सिंह अपने स्कूल से १२ मील पैदल चलकर जलियाँवाला बाग पहुँच गए। इस उम्र में भगत सिंह अपने चाचाओं की क्रान्तिकारी किताबें पढ़ कर सोचते थे कि इनका रास्ता सही है कि नहीं ? गांधी जी का असहयोग आन्दोलन छिड़ने के बाद वे गान्धी जी के अहिंसात्मक तरीकों और क्रान्तिकारियों के हिंसक आन्दोलन में से अपने लिए रास्ता चुनने लगे। गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन को रद्द कर देने के कारण उनमें थोड़ा रोष उत्पन्न हुआ, पर पूरे राष्ट्र की तरह वो भी महात्मा गाँधी का सम्मान करते थे। पर उन्होंने गाँधी जी के अहिंसात्मक आन्दोलन की जगह देश की स्वतन्त्रता के लिए हिंसात्मक क्रांति का मार्ग अपनाना अनुचित नहीं समझा। उन्होंने जुलूसों में भाग लेना प्रारम्भ किया तथा कई क्रान्तिकारी दलों के सदस्य बने। उनके दल के प्रमुख क्रान्तिकारियों में चन्द्रशेखर आजाद, सुखदेव, राजगुरु इत्यादि थे। काकोरी काण्ड में ४ क्रान्तिकारियों को फाँसी व १६ अन्य को कारावास की सजाओं से भगत सिंह इतने अधिक उद्विग्न हुए कि उन्होंने १९२८ में अपनी पार्टी नौजवान भारत सभा का हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसिएशन में विलय कर दिया और उसे एक नया नाम दिया हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन।

लाला जी की मृत्यु का प्रतिशोध

१९२८ में साइमन कमीशन के बहिष्कार के लिए भयानक प्रदर्शन हुए। इन प्रदर्शनों में भाग लेने वालों पर अंग्रेजी शासन ने लाठी चार्ज भी किया। इसी लाठी चार्ज से आहत होकर लाला लाजपत राय की मृत्यु हो गई। अब इनसे रहा न गया। एक गुप्त योजना के तहत इन्होंने पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट स्काट को मारने की योजना सोची। सोची गई योजना के अनुसार भगत सिंह और राजगुरु लाहौर कोतवाली के सामने व्यस्त मुद्रा में टहलने लगे। उधर जयगोपाल अपनी साइकिल को लेकर ऐसे बैठ गए जैसे कि वो ख़राब हो गई हो। गोपाल के इशारे पर दोनों सचेत हो गए। उधर चन्द्रशेखर आज़ाद पास के डी० ए० ।वी० स्कूल की चहारदीवारी के पास छिपकर घटना को अंजाम देने में रक्षक का काम कर रहे थे।

१७ दिसंबर १९२८ को करीब सवा चार बजे, ए० एस० पी० सॉण्डर्स के आते ही राजगुरु ने एक गोली सीधी उसके सर में मारी जिससे वह पहले ही मर जाता। लेकिन तुरन्त बाद भगत सिंह ने भी ३-४ गोली दाग कर उसके मरने का पूरा इन्तज़ाम कर दिया। ये दोनों जैसे ही भाग रहे थे कि एक सिपाही चनन सिंह ने इनका पीछा करना शुरू कर दिया। चन्द्रशेखर आज़ाद ने उसे सावधान किया - "आगे बढ़े तो गोली मार दूँगा।" नहीं मानने पर आज़ाद ने उसे गोली मार दी और वो वहीं पर मर गया। इस तरह इन लोगों ने लाला लाजपत राय की मौत का बदला ले लिया।

एसेम्बली में बम फेंकना

भगत सिंह यद्यपि रक्तपात के पक्षधर नहीं थे परन्तु वे वामपंथी विचारधारा को मानते थे, तथा कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों से उनका ताल्लुक था और उन्हीं विचारधारा को वे आगे बढ़ा रहे थे। यद्यपि, वे समाजवाद के पक्के पोषक भी थे। कलान्तर में उनके विरोधी द्वारा उनको अपनी विचारधारा का बता कर युवाओ को भगत सिंह के नाम पर बरगलाने के आरोप लगते रहे है। काँग्रेस के सत्ता में रहने के बावजूद भगत सिंह को काँग्रेस शहीद का दर्जा नही दिलवा पाए, क्योंकि वे केवल भगत सिंह के नाम का इस्तेमाल युवाओं को अपनी पार्टी से जोड़ने के लिए करते थे। उन्हें पूँजीपतियों की मजदूरों के प्रति शोषण की नीति पसन्द नहीं आती थी। उस समय चूँकि अँग्रेज ही सर्वेसर्वा थे तथा बहुत कम भारतीय उद्योगपति उन्नति कर पाये थे, अतः अँग्रेजों के मजदूरों के प्रति अत्याचार से उनका विरोध स्वाभाविक था। मजदूर विरोधी ऐसी नीतियों को ब्रिटिश संसद में पारित न होने देना उनके दल का निर्णय था। सभी चाहते थे कि अँग्रेजों को पता चलना चाहिए कि हिन्दुस्तानी जाग चुके हैं और उनके हृदय में ऐसी नीतियों के प्रति आक्रोश है। ऐसा करने के लिये ही उन्होंने दिल्ली की केन्द्रीय एसेम्बली में बम फेंकने की योजना बनाई थी।

भगत सिंह चाहते थे कि इसमें कोई खून खराबा न हो और अँग्रेजों तक उनकी 'आवाज़' भी पहुँचे। हालाँकि प्रारम्भ में उनके दल के सब लोग ऐसा नहीं सोचते थे पर अन्त में सर्वसम्मति से भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त का नाम चुना गया। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार ८ अप्रैल १९२९ को केन्द्रीय असेम्बली में इन दोनों ने एक ऐसे स्थान पर बम फेंका जहाँ कोई मौजूद न था, अन्यथा उसे चोट लग सकती थी। पूरा हाल धुएँ से भर गया। भगत सिंह चाहते तो भाग भी सकते थे पर उन्होंने पहले ही सोच रखा था कि उन्हें दण्ड स्वीकार है चाहें वह फाँसी ही क्यों न हो; अतः उन्होंने भागने से मना कर दिया। उस समय वे दोनों खाकी कमीज़ तथा निकर पहने हुए थे। बम फटने के बाद उन्होंने "इंकलाब-जिन्दाबाद, साम्राज्यवाद-मुर्दाबाद!" का नारा[11] लगाया और अपने साथ लाये हुए पर्चे हवा में उछाल दिए। इसके कुछ ही देर बाद पुलिस आ गई और दोनों को गिरफ़्तार कर लिया गया।

जेल के दिन

जेल में भगत सिंह करीब २ साल रहे। इस दौरान वे लेख लिखकर अपने क्रान्तिकारी विचार व्यक्त करते रहते थे। जेल में रहते हुए भी उनका अध्ययन लगातार जारी रहा। उनके उस दौरान लिखे गये लेख व सगे सम्बन्धियों को लिखे गये पत्र आज भी उनके विचारों के दर्पण हैं। अपने लेखों में उन्होंने कई तरह से पूँजीपतियों को अपना शत्रु बताया है। उन्होंने लिखा कि मजदूरों का शोषण करने वाला चाहें एक भारतीय ही क्यों न हो, वह उनका शत्रु है। उन्होंने जेल में अंग्रेज़ी में एक लेख भी लिखा जिसका शीर्षक था **मैं नास्तिक क्यों हूँ?**[12][13] जेल में भगत सिंह व उनके साथियों ने ६४ दिनों तक भूख हडताल की। उनके एक साथी यतीन्द्रनाथ दास ने तो भूख हड़ताल में अपने प्राण ही त्याग दिये थे।

फाँसी

26 अगस्त, 1930 को अदालत ने भगत सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 129, 302 तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4 और 6एफ तथा आईपीसी की धारा 120 के अंतर्गत अपराधी सिद्ध किया। 7 अक्तूबर, 1930 को अदालत के द्वारा 68 पृष्ठों का निर्णय दिया, जिसमें भगत सिंह, सुखदेव तथा राजगुरु को फाँसी की सजा सुनाई गई। फाँसी की सजा सुनाए जाने के साथ ही लाहौर में धारा 144 लगा दी गई। इसके बाद भगत सिंह की फाँसी की माफी के लिए प्रिवी परिषद में अपील दायर की गई परन्तु यह अपील 10 जनवरी, 1931 को रद्द कर दी गई। इसके बाद तत्कालीन काँग्रेस अध्यक्ष पं. मदन मोहन मालवीय ने वायसराय के सामने सजा माफी के लिए 14 फरवरी, 1931 को अपील दायर की कि वह अपने विशेषाधिकार का प्रयोग करते हुए मानवता के आधार पर फांसी की सजा माफ कर दें। भगत सिंह की फाँसी की सज़ा माफ़ करवाने हेतु महात्मा गाँधी ने 17 फरवरी 1931 को वायसराय से बात की फिर 18 फरवरी, 1931 को आम जनता की ओर से भी वायसराय के सामने विभिन्न तर्को के साथ सजा माफी के लिए अपील दायर की। यह सब कुछ भगत सिंह की इच्छा के खिलाफ हो रहा था क्यों कि भगत सिंह नहीं चाहते थे कि उनकी सजा माफ की जाए।

23 मार्च 1931 को शाम में करीब 7 बजकर 33 मिनट पर भगत सिंह तथा इनके दो साथियों सुखदेव व राजगुरु को फाँसी दे दी गई।[14] फाँसी पर जाने से पहले वे लेनिन की जीवनी पढ़ रहे थे और जब उनसे उनकी आखरी इच्छा पूछी गई तो उन्होंने कहा कि वह लेनिन की जीवनी पढ़ रहे थे और उन्हें वह पूरी करने का समय दिया जाए।[15] कहा जाता है कि जेल के अधिकारियों ने जब उन्हें यह सूचना दी कि उनके फाँसी का वक्त आ गया है तो उन्होंने कहा था- "ठहरिए! पहले एक क्रान्तिकारी दूसरे से मिल तो ले।" फिर एक मिनट बाद किताब छत की ओर उछाल कर बोले - "ठीक है अब चलो।"

फाँसी पर जाते समय वे तीनों मस्ती से गा रहे थे -

मेरा रँग दे बसन्ती चोला, मेरा रँग दे।
मेरा रँग दे बसन्ती चोला। माय रँग दे बसन्ती चोला॥

फाँसी के बाद कहीं कोई आन्दोलन न भड़क जाये इसके डर से अंग्रेजों ने पहले इनके मृत शरीर के टुकड़े किये फिर इसे बोरियों में भरकर फिरोजपुर की ओर ले गये जहाँ घी के बदले मिट्टी का तेल डालकर ही इनको जलाया जाने लगा। गाँव के लोगों ने आग जलती देखी तो करीब आए। इससे डरकर अंग्रेजों ने इनकी लाश के अधजले टुकड़ों को सतलुज नदी में फेंका और भाग गए। जब गाँव वाले पास आए तब उन्होंने इनके मृत शरीर के टुकड़ो कों एकत्रित कर विधिवत दाह संस्कार किया। और भगत सिंह हमेशा के लिए अमर हो गये। इसके बाद लोग अंग्रेजों के साथ-साथ गाँधी को भी इनकी मौत का जिम्मेवार समझने लगे। इस कारण जब गान्धी काँग्रेस के लाहौर अधिवेशन में हिस्सा लेने जा रहे थे तो लोगों ने काले झण्डों के साथ गाँधी जी का स्वागत किया। एकाध जगह पर गाँधी पर हमला भी हुआ, किन्तु सादी वर्दी में उनके साथ चल रही पुलिस ने बचा लिया।

सम्पादक,प्रकाशक,मुद्रकः शशिकान्तजोशी, जयन्ती प्रकाशन लक्ष्मणगढ़ (सीकर) राजस्थानकृष्णाप्रिन्टर्स के लिये सागरकम्प्यूटर, जयपुर द्वारा मुद्रित,प्रबन्ध सम्पादक- डॉ महेन्द्रआचार्य, समाचार सम्पादक- भानुप्रकाश जोशी